

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 49 — हस्तिनापुर में अक्रूर

5 October 2026



पितृहीन पाण्डवों का हाल जानने श्रीकृष्ण द्वारा भेजे गए अक्रूर कुन्ती की अश्रुपूर्ण प्रार्थना सुनते हैं, कुरुओं के अन्धे राजा को धर्म का उपदेश देते हैं, और पाते हैं कि पुत्र-स्नेह में डूबा हृदय हितकारी वचनों को थाम नहीं पाता।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस उनचासवें अध्याय में अक्रूर प्रभु द्वारा सौंपा गया कार्य हस्तिनापुर में पूरा करते हैं, भरी सभा में राजा धृतराष्ट्र को समझाते हैं, और राजा का सच्चा किन्तु विवश उत्तर लेकर बलराम और श्रीकृष्ण के पास लौट आते हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध)
- अध्याय: 49 (एकोनपञ्चाश अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: हस्तिनापुर में अक्रूर का दौत्य
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए); अध्याय के भीतर कुन्ती, अक्रूर और धृतराष्ट्र बोलते हैं
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: कुरुराजधानी हस्तिनापुर; समापन मथुरा में
- केंद्रीय विषय: हस्तिनापुर में अक्रूर का निवास; कुन्ती का विलाप और श्रीकृष्ण से प्रार्थना; धृतराष्ट्र को समदर्शिता का उपदेश; राजा द्वारा अपनी आसक्ति की स्वीकृति और प्रभु की इच्छा के आगे नमन; बलराम-कृष्ण को अक्रूर का निवेदन
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 1-31
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी संस्करण, दशम स्कन्ध)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

अड़तालीसवें अध्याय में श्रीकृष्ण अक्रूर के घर पधारे, जहाँ अक्रूर ने उनकी पूजा की और उन्हें शरणागतों का आश्रय कहकर उनकी स्तुति की। तब प्रभु ने उन्हें एक कार्य सौंपा — हस्तिनापुर जाकर यह जानना कि अपने दुष्ट पुत्र की इच्छा पर चलने वाले अन्धे राजा धृतराष्ट्र के राज्य में कुन्ती और उनके पितृहीन पुत्रों के साथ कैसा व्यवहार हो रहा है, ताकि यादव पाण्डवों के कल्याण के लिए उचित उपाय कर सकें।

अक्रूर का हस्तिनापुर आगमन

शुकदेवजी ने राजा परीक्षित से कथा आगे बढ़ाई। अक्रूर पुरुवंशी राजाओं के यश से अंकित नगरी हस्तिनापुर पहुँचे, और वहाँ उन्होंने अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्र को कुरुकुल के महापुरुषों के बीच देखा — भीष्म, विदुर और कुन्ती; पुत्र सोमदत्त सहित बाह्लीक; भरद्वाजपुत्र द्रोण और गौतमवंशी कृपाचार्य; कर्ण, दुर्योधन और अश्वत्थामा; अपने चारों भाइयों सहित युधिष्ठिर; तथा कुल के अन्य हितैषी। गान्दिनीनन्दन ने प्रत्येक सम्बन्धी से उसके योग्य रीति से भेंट की। उन सबने मथुरा के अपने स्वजनों का कुशल-समाचार उत्सुकता से पूछा, और अक्रूर ने भी उनकी कुशलता पूछी।



पुरुवंशी राजाओं के यश से उज्ज्वल नगरी हस्तिनापुर में पहुँचे अक्रूर का भीष्म, विदुर, कुन्ती, पाण्डव और समस्त कुरुकुल स्वागत करते हैं।

अकूर कई महीने हस्तिनापुर में रुके, क्योंकि वे अपनी आँखों से देखना चाहते थे कि राजा पाण्डुपुत्रों के साथ कैसा बर्ताव करते हैं — वह राजा जिसके पुत्र दुष्ट थे, जिसका अपना नैतिक बल थोड़ा था, और जो दुष्ट सलाहकारों की इच्छा के अनुसार चलता था। जो वे स्वयं न देख सके, वह कुन्ती और विदुर ने उन्हें स्पष्ट बता दिया। उन्होंने वह सब कह सुनाया जो दुर्योधन और उसके भाई पाण्डवों के विरुद्ध कर चुके थे और आगे करने की ठान रहे थे — विष देने तक — क्योंकि वे कुन्ती-पुत्रों का तेज, ओज, बल और पराक्रम, विनय और अन्य सद्गुण सह नहीं पाते थे, और न ही प्रजा का उनके प्रति प्रेम।

कुन्ती का विलाप

तब कुन्ती अपने भाई-समान सम्बन्धी अकूर के पास आई। अपनी जन्मभूमि मथुरा की स्मृतियाँ उनके हृदय में उमड़ आई, और आँखों में आँसु भरकर वे बोलीं — “सौम्य, क्या मेरे माता-पिता मुझे अब भी याद करते हैं? क्या मेरे भाई और बहनें, मेरे भतीजे, घर की स्त्रियाँ और मेरी सखियाँ कभी मुझे स्मरण करती हैं? क्या मेरे भतीजे श्रीकृष्ण, जो सबके आश्रय और भक्तों के प्रिय हैं, अपनी बुआ के पुत्रों को याद करते हैं? क्या कमलनयन बलराम उन्हें याद करते हैं? मैं यहाँ शत्रुओं के बीच वैसे ही शोक कर रही हूँ जैसे भेड़ियों के बीच कोई हिरनी। क्या वे कभी आकर अपने वचनों से मुझे और मेरे इन पितृहीन बालकों को सान्त्वना देंगे?”



अपने पीहर को याद करती कुन्ती अकूर से पूछती हैं कि क्या श्रीकृष्ण और बलराम उनके पितृहीन पुत्रों को अब भी स्मरण करते हैं, और उनका शोक गोविन्द से शरण की प्रार्थना बन उठता है।

उनकी व्यथा, जैसा किसी भक्त की व्यथा के साथ सदा होता है, प्रार्थना बन गई।

कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वभावन ।
प्रपन्नां पाहि गोविन्द शिशुभिश्चावसीदतीम् ॥ ११ ॥

kṛṣṇa kṛṣṇa mahā-yogin viśvātman viśva-bhāvana prapannāṁ pāhi govinda śīsubhiś cāvasīdatīm

अर्थ: हे कृष्ण, हे कृष्ण, हे महायोगी, हे विश्वात्मा, हे विश्व के पालक! हे गोविन्द, मैं आपकी शरण में आई हूँ; अपने बच्चों के साथ डूबती हुई मेरी रक्षा कीजिए। (स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 11)

उन्होंने आगे कहा कि मृत्यु और जन्म-मरण के चक्र से भयभीत मनुष्यों के लिए उन्हें प्रभु के चरणकमलों के सिवा कहीं कोई आश्रय नहीं दिखता, जो अकेले ही मुक्ति देने वाले हैं, क्योंकि वे सर्वसमर्थ ईश्वर हैं। और उन्होंने अपनी बात एक ऐसे नमस्कार से पूरी की जो स्वयं श्रद्धा की स्वीकारोक्ति है।

नमः कृष्णाय शुद्धाय ब्रह्मणे परमात्मने ।
योगेश्वराय योगाय त्वामहं शरणं गता ॥ १३ ॥

namaḥ kṛṣṇāya śuddhāya brahmaṇe paramātmāne yogeśvarāya yogāya tvām ahaṁ śaraṇaṁ gatā

अर्थ: सर्वशुद्ध, ब्रह्मस्वरूप, परमात्मा, योगेश्वर और स्वयं योगरूप श्रीकृष्ण को नमस्कार; मैं आपकी शरण में आ गई हूँ। (स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 13)

इस प्रकार अपने स्वजनों को और सबसे बढ़कर जगदीश्वर श्रीकृष्ण को स्मरण करती हुई परीक्षित की प्रपितामही दुःख से फूट-फूटकर रोई। सुख-दुःख में समान रहने वाले अक्रूर और महायशस्वी विदुर ने उन्हें यह स्मरण दिलाकर धैर्य बाँधाया कि उनके पुत्र किन दिव्य पिताओं की कृपा से जन्मे हैं।

अन्धे राजा को अक्रूर का उपदेश

लौटने का समय आने पर अक्रूर राजा धृतराष्ट्र के पास गए, जो अपने पुत्रों और भतीजों में भेद करते थे और अपने पुत्रों की ओर झुके रहते थे। वहाँ राजा के स्वजनों के बीच उन्होंने वह सन्देश सुनाया जो श्रीकृष्ण और बलराम ने सद्भाव से भेजा था।

“हे विचित्रवीर्यनन्दन,” उन्होंने कहा, “हे कुरुओं की कीर्ति बढ़ाने वाले, अपने भाई पाण्डु के परलोकगमन के बाद अब आप राजसिंहासन पर विराजमान हैं।”

धर्मेण पालयन्नुर्वी प्रजाः शीलेन रञ्जयन् ।
वर्तमानः समः स्वेषु श्रेयः कीर्तिमवाप्स्यसि ॥ १८ ॥

dharmeṇa pālayann urvīm prajāḥ śīlena rañjayan vartamānaḥ samaḥ sveṣu śreyaḥ kīrtim avāpsyasi

अर्थ: धर्म से पृथ्वी का पालन करते हुए, अपने सदाचार से प्रजा को प्रसन्न रखते हुए और अपने स्वजनों के प्रति समान भाव रखते हुए आप कल्याण और कीर्ति प्राप्त करेंगे। (स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 18)

अक्रूर ने चेताया कि इसके विपरीत आचरण करने पर वे इस लोक में निन्दित होंगे और मृत्यु के बाद अन्धकार में गिरेंगे; इसलिए पाण्डुपुत्रों के साथ ठीक वैसा ही व्यवहार करें जैसा अपने पुत्रों के साथ। फिर यदुवंश के इस दूत ने राजा की दृष्टि जीवन के सत्य की ओर उठाई। उन्होंने कहा कि इस संसार में किसी का किसी के साथ सदा का साथ नहीं — अपने शरीर के साथ भी नहीं; फिर स्त्री और सन्तान का क्या कहना?

एकः प्रसूयते जन्तुरेक एव प्रलीयते ।

एकोऽनुभुङ्क्ते सुकृतमेक एव च दुष्कृतम् ॥ २१ ॥

ekah prasūyate jantur eka eva praliyate eko 'nubhunkte sukṛtam eka eva ca duṣkṛtam

अर्थ: जीव अकेला ही जन्म लेता है और अकेला ही मरता है; अकेला ही अपने पुण्य का फल भोगता है और अकेला ही अपने पाप का फल भोगता है। (स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 21)

उन्होंने आगे कहा कि पुत्र आदि के नाम से जाने जाने वाले दूसरे लोग मूर्ख मनुष्य के अधर्म से जोड़े धन को वैसे ही पी जाते हैं जैसे जलचर के बच्चे उसी जल को पी लेते हैं जो उसका प्राण है। जिन प्राणों, धन और पुत्रों को मनुष्य अधर्म से अपना समझकर पालता है, वे उस अज्ञानी को उसके मनोरथ अधूरे रहते ही छोड़ देते हैं। उनके द्वारा त्यागा हुआ, केवल अपने पापों का बोझ लिए, अपने वास्तविक हित से अनजान और अपने धर्म से विमुख वह मनुष्य घोर नरक के अन्धकार में गिरता है।

तस्माल्लोकमिमं राजन् स्वप्नमायामनोरथम् ।

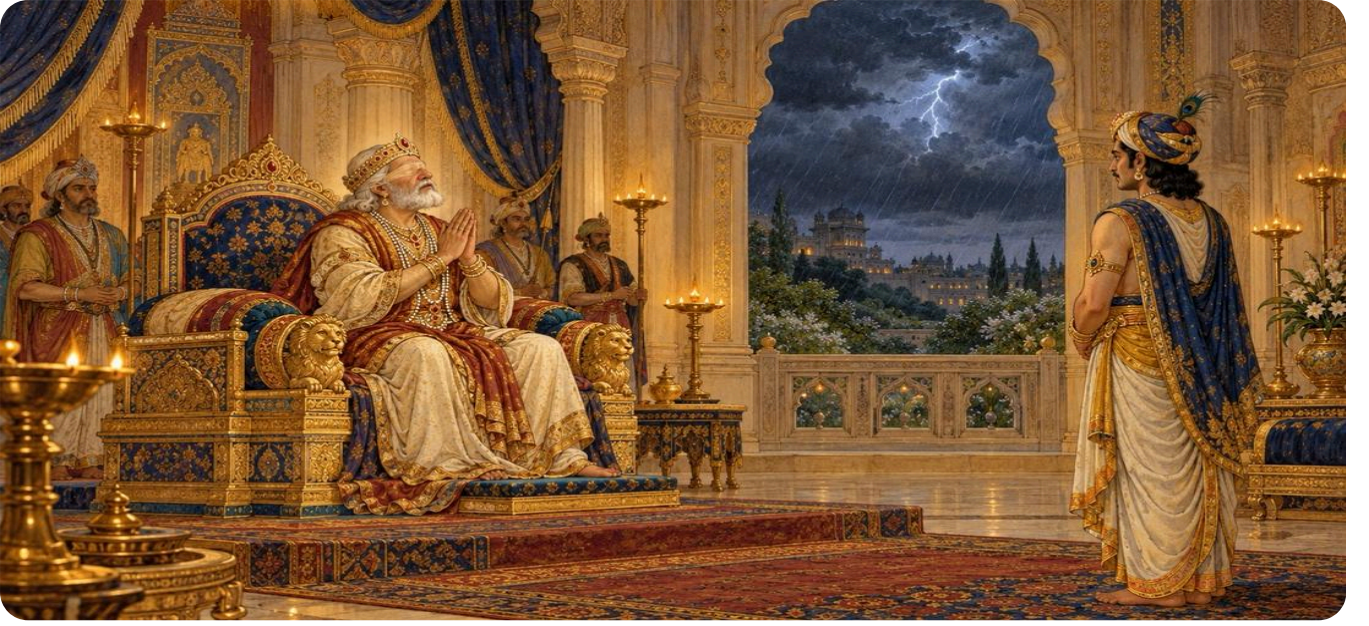
वीक्ष्याम्यात्मनाऽऽत्मानं समः शान्तो भव प्रभो ॥ २५ ॥

tasmāl lokam imam rājan svapna-māyā-manoratham vīkṣyāmyātmanātmānam samah śānto bhava prabho

अर्थ: इसलिए हे राजन्, इस संसार को स्वप्न, माया और मन की कल्पना-मात्र देखकर बुद्धि से मन को वश में कीजिए और हे प्रभो, समदर्शी और शान्त हो जाइए। (स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 25)

धृतराष्ट्र का उत्तर

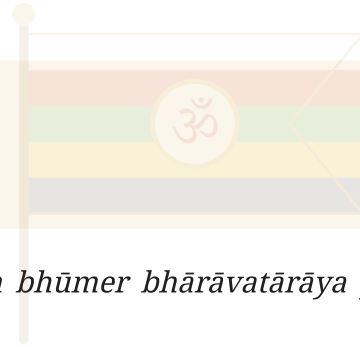
अन्धे राजा ने ऐसी स्पष्टता से उत्तर दिया जिसे सुनना पीड़ादायक है। “हे दानपते,” उन्होंने कहा, “आपके इन हितकारी वचनों से मुझे वैसे ही तृप्ति नहीं होती जैसे अमृत पाकर किसी मरणधर्मा मनुष्य को नहीं होती। फिर भी, सौम्य, यह सत्य और हितकर उपदेश पुत्र-स्नेह से विषम मेरे चंचल हृदय में वैसे ही नहीं ठहरता जैसे बादल में बिजली की चमक नहीं ठहरती।”



धृतराष्ट्र स्वीकार करते हैं कि अमृत-सा मीठा यह उपदेश पुत्र-स्नेह से विषम उनके हृदय में वैसे ही नहीं ठहरता जैसे बादल में बिजली — और यदुकुल में अवतरित प्रभु की इच्छा के आगे सिर झुका देते हैं।

फिर वे अपनी दुर्बलता से परे उस एक निश्चय तक पहुँचे जो उनके पास था।

ईश्वरस्य विधिं को नु विधुनोत्यन्यथा पुमान् ।
भूमेर्भारिवताराय योऽवतीर्णो यदोः कुले ॥ २८ ॥



īśvarasya vidhiṁ ko nu vidhunoty anyathā pumān bhūmer bhārāvatārāya yo 'vatīrṇo yadoḥ kule

अर्थ: पृथ्वी का भार उतारने के लिए जो यदुकुल में अवतरित हुए हैं, उन परमेश्वर के विधान को भला कौन मनुष्य टाल सकता है? (स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 28)

यो दुर्विमर्शपथया निजमाययेदं सृष्ट्वा गुणान् विभजते तदनुप्रविष्टः ।
तस्मै नमो दुरवबोधविहारतन्त्रसंसारचक्रगतये परमेश्वराय ॥ २९ ॥

yo durvimarśa-pathayā nija-māyayedam sṛṣṭvā guṇān vibhajate tad-anupraviṣṭaḥ tasmai namo duravabodha-vihāra-tantra- saṁsāra-cakra-gataye parameśvarāya

अर्थ: जो अपनी अचिन्त्य माया से इस जगत् की रचना कर उसमें प्रविष्ट होकर प्राणियों को उनके कर्म और फल बाँटते हैं, और जिनकी दुर्बोध लीला से संसार-चक्र घूमता है, उन परमेश्वर को नमस्कार है। (स्कन्ध 10, अध्याय 49, श्लोक 29)

यहीं इस अध्याय का मर्म है। धृतराष्ट्र जानते हैं कि उचित क्या है, स्वीकार करते हैं कि उनका हृदय उसे थाम नहीं सकता, और फिर सारा विषय यदुकुल में अवतरित प्रभु के चरणों में रख देते हैं। उनके शब्द एक साथ बहाना भी हैं और आगे की झलक भी। श्रीकृष्ण ने अक्रूर को राजा को सुधारने नहीं भेजा था; उन्हें राजा का मन जानने भेजा था, और वह मन अब खुलकर सामने है — आनन्द से सुना गया और आसक्ति के कारण त्यागा गया धर्म। पृथ्वी का जो भार उतारने प्रभु अवतरित हुए, वह ठीक ऐसे ही हृदयों से बना है — ऐसे शासकों से जो सही को देखकर भी गलत से चिपके रहते हैं; और राजा की अपनी स्वीकारोक्ति दिखाती है कि उस भार का उतरना प्रभु का विधान होगा, राजनीति का संयोग नहीं। उनका नमस्कार भी सच्चा है, क्योंकि जो हाथ संसार-चक्र घुमाता है, वही पाण्डवों की रक्षा भी करेगा।

अक्रूर की मथुरा वापसी

इस प्रकार राजा का मन जानकर और अपने स्वजनों — कौरवों और पाण्डवों दोनों — की अनुमति लेकर यदुवंशी अक्रूर यादवों की नगरी मथुरा लौट आए। वहाँ उन्होंने बलराम और श्रीकृष्ण को बताया कि धृतराष्ट्र युधिष्ठिर और उनके भाइयों के साथ कैसा व्यवहार कर रहे हैं — वही बात, जैसा शुकदेवजी ने परीक्षित को स्मरण दिलाया, जिसके लिए उन्होंने अक्रूर को भेजा था। इसी घर-वापसी के साथ दशम स्कन्ध का पूर्वार्ध पूर्ण होता है।



कार्य पूरा कर अक्रूर मथुरा लौटते हैं और बलराम तथा श्रीकृष्ण को बताते हैं कि धृतराष्ट्र पाण्डुपुत्रों के साथ कैसा बर्ताव कर रहे हैं।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रभु अपने भक्त को वहाँ भेजते हैं जहाँ उनकी करुणा चाहिए। अक्रूर केवल सन्देश नहीं पहुँचाते; वे महीनों कुरुओं के बीच रहकर देखते और सुनते हैं। भक्तों के लिए प्रभु की चिन्ता ऐसे सेवकों के माध्यम से पहुँचती है जिनमें सत्य देखने का धैर्य हो।
2. भक्त का शोक प्रार्थना में पक जाता है। कुन्ती यह पूछकर आरम्भ करती हैं कि मथुरा में कोई उन्हें याद करता है या नहीं, और श्लोक 11 में गोविन्द से अपनी और अपने बच्चों की रक्षा की पुकार पर पहुँचती हैं, और श्लोक 13 में घोषणा करती हैं कि वे उनकी शरण में आ गई हैं। प्रभु को अर्पित दुःख समर्पण बन जाता है।

3. समदर्शिता शासक का धर्म भी है और रक्षा भी। श्लोक 18 अपने स्वजनों को समान मानने वाले राजा को कल्याण और कीर्ति का वचन देता है, और उसके बाद की चेतावनी स्पष्ट करती है कि पक्षपात यहाँ अपयश और परलोक में अन्धकार दिलाता है।

4. हम अकेले आते हैं और अकेले जाते हैं। श्लोक 21 यह सीधा सत्य कहता है कि प्रत्येक जीव अकेला जन्मता, अकेला मरता और अकेला अपने कर्म भोगता है, और श्लोक 25 में अक्रूर उसका निष्कर्ष निकालते हैं — संसार को स्वप्न देखकर समदर्शी और शान्त हो जाइए।

5. आसक्ति सत्य सुनकर भी उसे रख नहीं पाती। धृतराष्ट्र अक्रूर के वचनों का अमृत की तरह रस लेते हैं, फिर भी मानते हैं कि वे बादल से बिजली की तरह उनके हृदय से फिसल जाते हैं। वैराग्य के बिना ज्ञान जीवन नहीं बदल सकता।

6. प्रभु के विधान को कोई नहीं टाल सकता। श्लोक 28 का राजा का प्रश्न और श्लोक 29 का उनका नमस्कार स्वीकार करते हैं कि प्रभु पृथ्वी का भार उतारने यदुवंश में अवतरित हुए हैं, और उनकी लीला ही समस्त सृष्टि का चक्र चलाती है।

एक भक्तिमय चिन्तन

इस अध्याय में हस्तिनापुर से दो प्रार्थनाएँ उठती हैं, और वे एक-दूसरे से अधिक भिन्न नहीं हो सकतीं। शत्रुओं से घिरी और बच्चों के साथ डूबती कुन्ती श्रीकृष्ण को नाम लेकर पुकारती हैं और उनके चरणकमलों की शरण लेती हैं; उनकी विवशता समर्पण का द्वार बन जाती है। सारी शक्ति हाथ में लिए सिंहासन पर बैठे धृतराष्ट्र भी परमेश्वर को नमस्कार करते हैं — किन्तु उनका नमन उस मनुष्य की आह है जो अपना प्रिय छोड़ना नहीं चाहता और आशा करता है कि उसका उत्तरदायित्व प्रभु ले लें। दोनों जानते हैं कि संसार का चक्र प्रभु के हाथ में है। एक उस ज्ञान को अपने को उनके चरणों तक ले जाने देती है; दूसरा उसी ज्ञान को वहीं बने रहने का सहारा बनाता है। हम भी हितकर उपदेश का अमृत चखकर उसे बादल की बिजली की तरह मिटते देख सकते हैं, क्योंकि कोई आसक्ति उस स्थान पर बैठी है जहाँ प्रभु को होना चाहिए। कुन्ती दूसरा मार्ग दिखाती हैं — जब संसार में कोई हमें याद न करे, तब भी विश्वात्मा हमें याद रखते हैं, बस हम उन्हें पुकारें तो। हर पाठक के सामने प्रश्न केवल इतना है कि इन दो स्वरो में से कौन-सा हमारे अपने हृदय की भाषा बोलता है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज एक ऐसी बात पहचानें जहाँ आप उचित मार्ग जानते हैं पर किसी आसक्ति के कारण उस पर चल नहीं रहे। अपने से तर्क करने के बजाय उसे कुन्ती के शब्दों में प्रभु के सामने रखें — “मैं आपकी शरण में आई हूँ; मेरी रक्षा कीजिए” — और उनसे वही समभाव माँगें जो अक्रूर ने राजा से चाहा था। फिर कुन्ती की प्रार्थना एक बार और पढ़ें या सुनें और उसी में विश्राम पाएँ। आरम्भ में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का यह उनचासवाँ अध्याय उस कार्य को पूरा करता है जिस पर श्रीकृष्ण ने अक्रूर को भेजा था, और स्कन्ध के पूर्वार्ध का समापन करता है। हस्तिनापुर में यदुवंश का यह दूत पाण्डवों पर मँडराते संकट का सत्य जानता है, गोविन्द से कुन्ती की अश्रुपूर्ण प्रार्थना सुनता है, और अन्धे राजा के सामने समदर्शिता का धर्म तथा अपने कर्मों के आगे प्रत्येक आत्मा का अकेलापन रखता है। धृतराष्ट्र का उत्तर इस अध्याय की

एकमात्र शिक्षा को उघाड़ देता है — उपदेश उस हृदय को नहीं बचा सकता जो सत्य से अधिक अपनी आसक्तियों से प्रेम करता है, और ऐसे हृदय जो कुछ आरम्भ करते हैं उसे प्रभु स्वयं उसके नियत अन्त तक पहुँचाते हैं। हम कुन्ती के पक्ष में पाए जाएँ, उनके चरणों में अपनी शरण लिए हुए।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

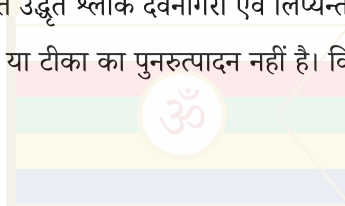
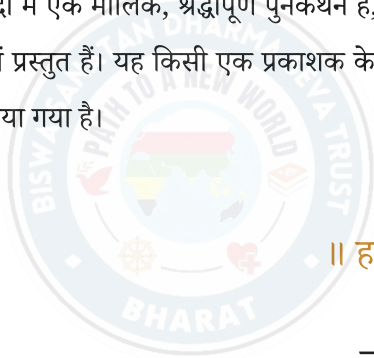
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी संस्करण), दशम स्कन्ध (पूर्वार्ध), एकोनपञ्चाश अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।



॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-49-akruras-mission-in-hastinapura-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट